Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
Available online at : www.gisrrj.com
OPEN ACCESS
© 2024 GISRRJ | Volume 7 | Issue 2 | ISSN : 2582-0095

कोटा राज्य की भोजन परम्परा : पाक कला के विशेष सन्दर्भ में

सुनीता राठौड़
शोधार्थी, इतिहास विभाग, स्कूल ऑफ आर्ट्स एंड ह्यूमैनिटीज, कैरियर पॉइन्ट युनिवर्सिटी, कोटा
डॉ. सोन कँवर हाडा
शोध निर्देशिका, इतिहास विभाग, स्कूल ऑफ आर्ट्स एंड ह्यूमैनिटीज, कैरियर पॉइन्ट युनिवर्सिटी, कोटा

Article Info

Article History
Accepted : 25 March 2024
Published : 05 April 2024

Publication Issue :
Volume 7, Issue 2
March-April-2024
Page Number : 94-100

शोध सारांश
राजस्थान एक गर्म जलवायु वाला प्रदेश है और कोटा उसका एक राज्य होने के कारण गर्म जलवायु की विशेषता को धारित करता है। कोटा में जलवायु के अनुसार दो फसले बोयी जाती थी – खरीफ व रबी। कोटा की उर्वरक काली मृदा में ज्वार, कपास, मक्का, सोयाबीन, मूंगफली, धनियां, गेहूँ, सरसों, चना, एवं अफीम की अच्छी पैदावार होती है। मनुष्य जब खान–पान से सन्तुष्ट होगा तब उसका रहन–सहन और उत्तरोत्तर होगा तथा उसका कुल सामाजिक स्तर भी श्रेष्ठ ही होगा।
संकेताक्षर : खाद्यान्न, भोजन, व्यंजन, शाकाहारी, मांसाहारी।

कोटा के वनों में धोकड़ा, धव, खैर, सालर, बहेड़ा, गुर्जन, खिरनी, खार, तेन्दू, शीशम, सागवान, तथा खेजड़ा, बहुतायात में पाया जाता है। इन वनस्पतियों में से कुछ कोटा की खाद्य संस्कृति में शामिल हुई जैसे धोकड़ा, खैर, खेजड़ा आदि। शहद, गोंद, कत्था व तेन्दु पत्ता कोटा रियासत की भोजन परम्परा का अंग बने। जंगलों में बेगड़ा, सूअर, भालू, मृग, चिंकारा, नीलगाय, चीतल, सांभर, खरगोश, गीदड, लक्कड़बग्घा आदि पशु पाये जाते है। यहाँ की नदियों, झीलों व तालाबों में विभिन्न किस्मों की मछलियाँ पाई जाती है। जंगलों में पाये जाने जानवरों में से कई को मांसाहार के लिए उपयुक्त माना गया था जैसे सांभर, सूअर, खरगोश, मछलियां आदि।

खरीफ की खाद्यान्न फसलों में प्रमुख स्थान बाजरा, मक्का एवं ज्वार को प्राप्त था। इन फसलों के साथ जंगली अन्नों के बीज मिश्रित करके बोये जाते थे। गरीब लोगों के भोजन का एक बहुत बड़ा भाग इन जंगली घासों से निकलने वाले अनाजों पर आधारित था। खरीफ के अन्तर्गत चावल एवं दालों की पैदावार भी की जाती थी। मुख्य रूप से कोटा में मोठ, मूंग, उड़द, चौला आदि की पैदावार होती थी। अरहर की बुवाई खरीफ की फसलों के साथ की जाती थी जबकि इसे रबी की फसलों के साथ काटा जाता था। ग्वार की हरी फलियाँ सब्जी के रूप में उपयोग में लाई जाती थी। पकी हुई ग्वार पशुओं के पौष्टिक आहार का प्रमुख अंग थी।

खरीफ की फसल में उपजने वाले खाद्यान्नों द्वारा बाजरा, ज्वार एवं मक्का का उपयोग चपाती एवं राबड़ी बनाकर भोजन के रूप में किया जाता था तथा मूंग, मोठ, उड़द, चौला की दालें, चपातियों अथवा बाटी के साथ सब्जी के रूप में उपयोग में लाई जाती थी। अनेक बार दालों एवं अनाजों के मिश्रित आटे का उपयोग चपाती बनाने में किया जाता था। बाजरा एवं मोठ के मिश्रित आटे की चपातियों को अधिक पौष्टिक माना जाता था। दलहन मुनष्य एवं पशुओं दोनों के लिए पौष्टिक आहार का मुख्य स्रोत थे। कोटा जैसे राज्य में जहाँ अधिकांश लोग शाकाहारी

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License.

थे के लिए दाल प्रोटीन का एकमात्र स्रोत थी तथा गरीब लोग भी दाल खा सकते थे, पशुओं के लिए दालों के छिलके तथा दलहनों के पत्तों का भूसा अत्यधिक पौष्टिक था। अरहर के अतिरिक्त सभी दलहनों को वर्षा भी अधिक नहीं चाहिए तथा खाद्यान्नों के साथ मिश्रित खेती होने के कारण इस पर पृथक से परिश्रम की आवश्यकता भी नहीं होती थी।[1]

तिलहन में तिल खरीफ की फसल में पैदा होने वाला मुख्य तिलहन था, जिसे नकदी फसलों की श्रेणी में रखा जा सकता है। तिल की खेती कमोबेश सम्पूर्ण कोटा रियासत में होती थी। तिल की खेती के लिए साधारण वर्षा की आवश्यकता होती है। अतः कोटा रियासत की विशेष भौगोलिक स्थितियों में जहाँ वर्षा का अभाव बना रहता था तिल की फसल की पैदावार ठीक थी। खाद्य तेल का प्रमुख स्रोत तिल की फसल थी। इस काल के कोटा रियासत के व्यापारिक स्वरूप के अवलोकन से ज्ञात होता है कि कोटा रियासत में उपजने वाले तिल का उपयोग स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु किया जाता था।[2]

कोटा राज्य के कई भागों में मूंगफली का उत्पादन होता था।[3] परन्तु स्थानीय तेल उद्योगों के अभाव, परम्परागत तरीके से तेल निकालने तथा यहाँ के लोगों के भोजन में शामिल न होने के कारण मूंगफली का उत्पादन अधिक मात्रा में नहीं हो सका।

गन्ना भी खरीफ की एक महत्त्वपूर्ण नकदी फसल थी। परन्तु सिंचाई की अच्छी सुविधाओं के अभाव में केवल स्थानीय उपयोग के लिए ही इसका उत्पादन किया जाता था। गुड़, शक्कर एवं पशुओं के चारे के लिए इसकी खेती की जाती थी।

रबी की फसल पर आधरित खाद्यान्न

रबी में पैदा होने वाली खाद्यान्न फसलों में चावल, गेहूँ, जौ एवं चना प्रमुख थे। इनमें से चावल व गेहूँ सबसे मूल्यवान खाद्यान्न फसल थी। रबी की मुख्य फसलें तिलहन, जिसमें सरसों एवं इसकी अन्य प्रजातियां उगाई जाती थी। शाक–सब्जियों का उत्पादन भी रबी की फसलों में प्रमुख था। रबी की फसलों में अपने आप उगने वाले शाक–सब्जियों में बथुआ के अतिरिक्त अन्य कोई शाक नहीं था। रबी की फसलों के समय चने, सरसों, मूली एवं गाजर की पत्तियों को साग बनाने में उपयोग किया जाता था। पृथक से उगाए जाने वाले सागों में पालक तथा मेथी को रबी की फसलों में उगाया जाता था। रबी की फसलों में पैदा होने वाली अन्य सब्जियों में मूली, गाजर, शलजम, बैंगन, टमाटर, आलू, पत्ता गोभी, फूल गोभी, चुकंदर, अरबी, कद्दू, ककड़ी, सक्करकंद, रतालू, करेला, प्याज एवं लहसून आदि थे। कोटा में इन्हीं सब्जियों का खाने के लिए अधिक प्रयोग किया जाता था।

कोटा की भोजन परम्परा

कोटा के जीवन में मुख्यतः भोजन शाकाहारी एवं मांसाहारी होता था। साधारण वर्ग एवं निम्न वर्ग के लोगों का मुख्य भोजन राबड़ी, सोगरा, रोटी, घाट आदि मुख्य था। भोजन में गुड़, घी, नमक का प्रयोग किया जाता था। सामान्य वर्ग के लोग भोजन में खिचड़ी का प्रयोग करते थे एवं उत्सवों के समय लापसी का प्रयोग करते थे। विभिन्न उच्च वर्ग के एवं राजघराने के लोगों द्वारा मेवे, मिष्ठान, अंगूर का अचार एवं मक्खन का भोजन में प्रयोग किया जाता था।[4]

कोटा राज्य के हिन्दुओं में मांस का सेवन किया जाता था, परन्तु गो मांस प्रायः प्रयुक्त नहीं होता था। फलों का खूब उपयोग किया जाता था और बहुधा ये बुखारा व समरकन्द से मंगवाये जाते थे।

राजस्थान की कोटा रियासत में प्रायः सभी परम्परागत निवासियों को मोटा अनाज एवं भांति–भांति के भोज्य पदार्थों या खाद्य व्यंजनों में रुचि थी। यद्यपि पाश्चात्य लोगों व गुजराती नागर ब्राह्मणों के कोटा प्रशासन में समायोजित होने से समाज पर उनका प्रभाव पड़ना भी स्वाभाविक था। इससे उदर की क्षुधापूर्ति हेतु सुपाच्य व विभिन्न प्रकार के नव–आहार भी यहां की संस्कृति में सम्मिलित हुए। यहां की युद्धप्रिय जातियों जैसे राजपूत व गुर्जरों ने अपने दीर्घकालिक यायावर व सैनिक प्रवृत्तियों के काल में भोजन को इस भाँति प्रयुक्त किया कि वह तात्कालिक संकटपूर्ण परिस्थितियों में भी उपलब्ध हो सके। दूसरी ओर भोजन को अविरल ताजगी पूर्ण बनाने के कतिपय वैज्ञानिक प्रयास भी किये गए। सद्येय आहार का महत्त्व अत्यन्त न्यून था।

दूसरी ओर, व्यंजनों के प्रति मुगल पद्धति अथवा जयपुर रियासत के समान अभिरुचि अभिजात्य वर्ग का एक प्रतिबिम्ब भी थी।[5] वृहद् प्रीतिभोजों के प्रति जनआस्था यहाँ के हरीतिमायुक्त प्राकृतिक सौन्दर्य के परिप्रेक्ष्य में सदैव पल्लवित होती रही थी।

सामरिक प्रवृत्ति की जातियों में आवासित कोटा में यद्यपि तामसी भोजन प्रचलित था तथापि ब्राह्मण वर्ग व न्यूनाधिक रूप से वैश्यों में पूर्ण निरामिष भोजन का ही अस्तित्व मान्य था। फिर भी मांसाहारियों में भी शाकाहारी को स्वीकार किया जाता था। कोटा की परम्पराओं तथा अनुश्रुतियों में अनेक व्यंजनों का निर्माण होता रहा है। जनश्रुतियों के साक्ष्य अनेक सुरभि युक्त आहारों के निर्माण का ज्ञान कराती है।

शीरमाल शीरी

भीषण शीत ऋतु में यह रोटीनुमा व्यंजन प्रयुक्त होता था। मैदा, शक्कर, केसर, पिस्ता, चिलगोजा[6] आदि को गूंदकर रोटी बनाकर, अंगारों के मध्य मिट्टी के पात्र में दबाकर कुछ घंटों तक इसकी सिकाई की जाती थी।

खमीर

यहाँ दो प्रकार की विशिष्ट पद्धतियाँ बहुत की जाती थी। प्रथम, दही में जायफल, दालचीनी व इलायची मिला कर खमीर उठाकर उसे मैदे में भूनकर ही व्यंजन में प्रयुक्त किया जाता था। द्वितीय, ग्रीष्म ऋतु में खट्टे दही में सौंफ मिला, मैदे में गूंथकर स्वच्छ कपड़े में बाँध कर गर्म हवा में कुछ घंटे लटकाया जाता था। तत्पश्चात् ठण्डे जल में उसे गूंथा जाता था।[7]

दालप्रिय

इसकी विशेषता मिट्टी के गर्म दीपक में रखी अदरक से छौंक लगाने में है। लहसुन, प्याज, घी, काली मिर्च, लाल मिर्च, तेजपान, दाल–चीनी, धनियाँ, नमक, अमचूर या इमली की धीमी आँच पर मृदा पात्र में ही निर्मित किया जाता था।

दलभजिया

दल भाजिया किसी रुचिकर दाल में राजस्थान के स्वदेशी पौधे फोग के पत्ते, कद्दू के पत्ते तथा एक अन्य स्थानीय वनस्पति जगनाथी पत्तों को मिलाकर यह व्यंजन बनता था।[8]

कढ़ी बेसन

बेसन की कढ़ी की प्रमुख विशेषता यह थी कि पकौड़ियाँ बनाने के घोल के लिए बेसन में दुगुनी मात्रा में दही मिलाकर इतना अधिक फैंटा जाता था कि तैयार घोल की बून्दें पानी में तैरने लगती तब कहीं पकौड़ियों को देशी घी में तला जाकर अत्यन्त स्वादिष्ट व फौसरी बनाई जाती थी।

इसके अतिरिक्त आँवले की पिष्ठी या पीठी को भी बेसन में दही के स्थान पर मिलाकर नए स्वाद की अनुभूति की जाती थी। पूर्वोक्त विधि द्वारा निर्मित पकौड़ी आँवला बेसन के घोल में भिन्न रुचि व पौष्टिकता व्यक्त करती थी। इसी विधि से यहाँ बहुविध सामग्री की कढ़ी भी बनती थी। इसमें मुख्यतः मूरार, हींगा, सहजन की फली, छरमा मीडा आदि का प्रचलन अधिक था।[9]

खुश्का

रणबांकुरों की प्रभुता कोटा की धरा ने युद्ध में जुझते हुए सेनानियों को बिना आग की व्यवस्था किए तथा भाप की उष्मा की वैज्ञानिक विधि से चावल पकाने का प्रशिक्षण भी दिया। जिससे शत्रुओं को धुएँ के न होने से सेना के शिविर का आभास न हो सके।

इस विधि के अन्तर्गत बिना बुझाए चूने को पानी में डालकर उसकी भाप के ऊपर एक पात्र में चावल पकाया जाता था। इसे रुचिकर बनाने हेतु केसर, किमाम व इलायची आवश्यकतानुसार डाली जाती थी।[10]

पोटली के चावल

युद्धकाल में अर्वाचीन साधनों से वंचित शूरमाओं को क्या–क्या उद्यम करने पड़ते थे, यह इससे स्पष्ट होता है कि जब उनके पास कोई पात्र भी नहीं होता था तो वे किसी कपड़े की पोटली में चावल बाँधकर नदी या छोटे–बड़े नाले (जो इस पहाड़ी अँचल में प्रायः उपलब्ध थे इन्हें 'खाळ' कहा जाता था) के समीप छोटे गड्ढे में गाड़कर, गीली मिट्टी से गड्ढे को पूर दिया जाता था। तदुपरान्त इसी स्थान पर लकड़ियों व पत्तों से आग जलाई जाती थी। फलतः जलधार के निकट की मिट्टी की नमी के वाष्पन से चावल पक जाते थे। इस पद्धति का दूरस्थ ग्राम्य क्षेत्रों में वर्तमान तक अस्तित्व है।

प्याज व लहसुन की खीर

प्याज व लहसुन की भिन्न–भिन्न खीर बनाना कोटा रियासत के अभिजात्य वर्ग में तथा मुख्यतः राजवंश में प्रचलित था। इसे अनेक उदर रोगों के लिए लाभदायक माना गया। इसके लिए सर्वप्रथम प्याज–लहसुन की दुर्गन्ध निवारण के प्रयास किए जाते थे। इसकी विधि के अन्तर्गत इन्हें पहले सादे पानी में उबाला जाता था। तदुपरान्त दो बार शक्कर व छाछ में उबालकर लहसुन–प्याज को पूर्णतः साफ किया जाता था। इससे उसकी दुर्गन्ध अंश मात्र भी न रह पाती थी। तदन्तर जितना प्याज–लहसुन पीस कर पीष्टि बन सके उसको चार गुनी शक्कर व आठ गुने दूध में पकाया जा कर खीर बनाई जाती थी।[11]

नीम के पत्तों का हलुवा

नीम के कृमिनाशक गुण का भरपूर लाभ उठाने के प्रयोजन से कोटा के जनसामान्य ही नहीं वरन् राजपरिवार तक में यह हलुवा प्रचलित था। सर्वप्रथम नीम के पत्तों को सादे पानी में बार–बार उबाला जाकर, इसकी कड़वाहट समाप्त की जाती थी। तदुपरान्त सफेद शक्कर की विशेष प्रकार की चाशनी उबाली गई पत्तियाँ उसमें डाली जाती थी। इस प्रकार निर्मित हलवे को कब्ज व मंदाकिनी का तुरन्त निवारण करने वाला माना जाता था।[12]

टेसू के फूलों का शहद

ग्रीष्म ऋतु में अत्यन्त सुपाच्य सुस्वाद व पौष्टिक शरबत बनाने हेतु कोटावासियों ने यह शब्द प्रयुक्त किया था। इसमें मात्रा की अधिकता से कोई प्रतिकूल प्रमाद, मधुमक्खी द्वारा निर्मित शहद के समान नहीं पड़ता था। यहाँ बाहुलता से प्राप्त टेसू के फूलों को डण्ठल सहित तोड़कर रस निचोड़ा जाता था। यही इस शहद की प्राप्ति का उपाय था। वर्षों तक यह खराब भी नहीं होता था।

इस राज्य में अधिकांश भू–भाग अरावली पर्वत श्रृंखलाओं व सघन वन से आच्छादित थे[13] तथा कड़वी नीम, खैर, धोकड़ा व देशी बबूल आदि के वृक्ष कुंज विपुल परिभाग में उगे हुए थे। इस कारण यहाँ अनेक हिंसक व वन्य पशु निर्बाध रूप से विचरते थे। स्वभावतया ही स्थानीयजन व राजपरिवार में शिकार किए गए पशु का आहार ग्रहण करना लोकप्रिय था। बकरे व भेड़े को भी इसी निमित्त प्रयुक्त किया जाता था। राजपरिवार के शिकार व व्यय राशि का लेखा–जोखा रखने हेतु एक विशेष कर्मचारी वर्ग नियुक्त होता था।[14] आमिष भोजन के संदर्भ में कतिपय आंचलिक पाक रचनाएँ अधोलिखित हैं।

मछली का अचार

कोटा में विभिन्न नदियों, जलाशयों में रोहू, लाँची व संवल आदि प्रजाति की मछलियाँ पकड़कर आहार रूप में प्रयुक्त की जाती थी। मछली का अचार बनाकर उसे एक विशिष्ट पात्र में सुरक्षित रखा जाता था। यह आचार लम्बे समय तक चलता था।

मछली के अन्य व्यंजन

बालकों अथवा वृद्धों के लिए मस्याहार को सहज बनाना कोटावासियों के लिए रुचिकर था। अतः ऐसी विधियाँ आविष्कृत की गई जिनमें तामसी मसालों की सुगंधयुक्त मत्स्य व्यंजन सभी के लिए खाद्य योग्य बन सके। इस हेतु काँटे निकाले बिना ही उन्हें गला कर मछली के साथ ही उदर्रस्थ करने की वैज्ञानिक विधियाँ भी प्रचलित हुईं।

मुतंजन पुलाव

इसकी विशेषता इसमें प्रयुक्त बकरे के गोश्त के आधे भाग को तलने व आधे को उबालकर नरम बनने में है। उबाले गए गोश्त को बादाम, अदरक व देशी घी युक्त मसालों में भली–भाँति पकाया जाता था। इस प्रकार दोनों भाँति के गोश्त को ऐसे चावल में मिलाकर लाल होने तक गर्म करते थे। जिसमें शक्कर व नींबू का रस मिला कर पहले ही उबाल लिया गया हो। तदन्तर पात्र को अंगारों पर धीमी आँच पर आटे से मुँह बन्द करके कुछ समय तक पुलाव को दम किया जाता था।[15]

राजपरिवार विशेष उत्सवों पर अपनी ओर से सुस्वाद भोजन का सार्वजनिक स्तर पर आयोजन करता था। 1905 में ऐसे एक अवसर पर 1351 रू. व्यय किए गए। अनेक ठिकानेदारों की हवेलियों में पुत्र जन्मोत्सव अथवा वर्षगाँठ आदि अवसरों पर अफीम तथा उसके उपरान्त भोजन का सार्वजनिक आयोजन किया जाता था। जो सम्पन्न–विपन्न दोनों के लिए किसी भी सीमा रेखा से परे था।

प्रायः यहाँ चिकित्सा सम्बन्धी अनुमानों व प्रतिबन्धों को व्रत–उपवासों से संबंध किया गया। उदाहरणार्थ, सप्ताह में एक दिन अलूणी (बिना नमक) भोजन किया जाता था। भारी दालों, यथा – उड़द, चना, मसूर आदि को कोटावासी कभी सायंकाल के उपरान्त सेवन न करते थे। इससे सांस्कृतिक परम्पराओं के धरातल पर रात्रिकालीन उदर विकारों से मुक्त रहना नियोजित था।

आयुर्वेदिक नियमों का अनुसरण चाहे शिक्षित वर्ग करे न करे, परन्तु यहाँ के पूर्णतः निरक्षर व आदिवासियों तक वर्षा ऋतु में मांसाहार प्रतिबन्धित था। इस समय शिकार करना तक इन्होंने निषेध बनाए रखा। यद्यपि यहाँ के घने जंगलों में कंजरों, भीलों आदि को विभिन्न पशु–पक्षियों का शिकार करने का व्यसन था।

मकर संक्रांति पर तिल, मूँगफली व गुड़ के व्यंजनों के अतिरिक्त गुड़ की पपड़ी नामक एक रुचिकर वस्तु पुरानी पीढ़ी के हलवाई विक्रय करते थे।

गुर्जर जाति बहुल इस क्षेत्र में दूधारू पशुओं को पालना प्रत्येक ग्राम, नगर व उपनगर में भारी प्रचलन में था। इस कारण स्थानीय व लोक देवताओं, यथा – तेजाजी, लाखाजी आदि को दुग्ध अर्पित करना सर्वसाधारण में सर्वमान्य नियम था।

स्वतन्त्रता पूर्व यहाँ साग–सब्जियों को खाने का प्रचलन कम था। उनके स्थान पर सहज सुलभ छाछ व मक्का के आटे से निर्मित 'राबड़ी' अधिक प्रयुक्त की जाती थी। अतः स्पष्ट है स्वभावतः यहाँ की संस्कृति भोजन के विभिन्न प्रकारों को अपने उपादान निर्मित करती आई थी। इसी क्रम में होली पर फाग खेलने वाले टेसू के फूलों के रंगों से एक–दूसरे को भिगोने के साथ इन्हीं फूलों की एक विशेष प्रकार की सब्जी बनाई जाती थी।

प्रायः केले के पत्तों पर भोजन परोसना सभी अंचलों में सहभोजों प्रचलित था। कोटा राज्य में कैंत का फल सर्वसुलभ था। अतः भोजन में पौदीने व धनिये के अतिरिक्त कैंत व खट्टी इमली की चटनी का सामान्यतः प्रयोग होता था। उदर विकारों में गुणकारी बिल्व फल (बील का फल) भी यहाँ उपलब्ध होता था। अतः बील के शरबत का प्रयोग आयुर्वेदिक रिति से करने के अतिरिक्त बील के फल को शिव पूजा में अर्पित करने को सर्वमान्य परंपरा भी प्रचलित थी।

हजूर का रसोड़ा कोटा के महाराव के भोजन के प्रबन्ध हेतु होता था। हजूर का रसोड़ा में कोटा के महाराव के लिये भोजन तैयार किया जाता था। राव के नौकर चाकर, मर्जीदान भी यही से भोजन प्राप्त करते थे। महाराव के

भोजन का थाल रसोईदारों द्वारा तैयार करने के पश्चात 'चखणे' पदाधिकारी को चखाया जाता था। राजघरानों में प्रसूता स्त्रीयों के लिये **सुवावह खर्च** (पौष्टिक भोजन खर्चा) के लिये दिये जाते थे।[16] विवाह के अवसर पर वर–वधू की **बिन्दौरी** जुलूस निकलती थी। बारात विदा होने से एक दिन पहले मेल गोठ होती थी जिसमें काफी खर्च किया जाता था। मेल गोठ में भोजन आदि की व्यवस्था होती थी यह भव्य होता था जिसमें लाखों रूपयें खर्च कर दिये जाते थे।[17]

सार रूप में धार्मिक, सांस्कृतिक व भौगोलिक विशेषताओं ने यहाँ की आहार विधियों में पूर्ण स्थान पाया था।

मुगलों के सम्पर्क में आने से कोटा में मावे की खीर, खुरासानी, खिचड़ी, लापसी, गुगरी, कचौरी, पुलाव, जलेबी, मुरब्बा, भुनी हुई वस्तुएं एवं सूखे मेवे, कबाब आदि का प्रयोग हिन्दू परिवारों (समृद्ध एवं साधारणजन) में बढ़ गया। हिन्दुओं के काचरी, सांगरी व फलियों की सब्जी, शीरा (हलवा), लापसी, बाजरे की रोटी का प्रचलन भी मुगलों में बढ़ा।

मुगलों के सम्पर्क से भोजन के बाद हिन्दुओं में इलायची, सुपारी खाने का प्रचलन बढ़ गया। मुगलों द्वारा भोजन के बाद पान चबाने का प्रचलन था। जिनमें खैर, चूना, सुपारी के अतिरिक्त सुगंधित द्रव्य मिलाये जाते थे। कोटा राज्य में रानियों में होली, दीपावली व अनेक अवसरों पर पानी के बीड़े वितरित किये जाते थे।[18] मुगल प्रभाव के कारण राज्य में पारिवारिक उत्सवों व त्यौंहारों पर भोजन के बाद पान खाने का रिवाज प्रारम्भ हुआ।[19]

मुगल सम्पर्क से चूर्ण की हुई रोटी में घी–शक्कर को मिलाकर खाने योग्य बनाया जाता था जिसे मलीदा कहा जाता था। हरीरा नामक खाद्य सूजी, शक्कर, सौंफ व इलायची को मिलाकर कम गाढ़ा बनया जाता था। दूध में उबले आटे, घी, शक्कर, खसखस, छुहारे व बादाम के मिश्रण से बनाई गयी एक प्रकार की सेवइंया होती थी जिनहें सरोले व सेवई कहा जाता था।[20] मुगलों के सम्पर्क से भोजन में बालुशाही, गुलाबजामुन, बर्फी, शाहजहांई पुलाव, कलाकंद आदि नवीन मिठाईयों का प्रचलन बढ़ गया था।

पेय पदार्थों के रूप में कोटा राज्य में नये पेय पदार्थ जैसे – शर्बत, शिकंजी (आबशोरा) आदि का प्रचलन हुआ।[21] मुगलों में शर्बत की अनेक प्रकार की किस्में थीं – अंगूर का शर्बत, चन्दन का शर्बत, मोगरे का शर्बत, केसर का शर्बत आदि जो कि कोटा में भी लोकप्रिय रहीं। अफीम, शराब और भांग का प्रचलन कोटा के महाराजाओं में ही नहीं बल्कि जनसाधारण में भी बढ़ गया। एक प्रकार का पेय पदार्थ जो चावलों से बनता था उसे सिकन्जवीन कहा जाता था। यह सिकन्जवीन सिरका व शहद का मिश्रण होती थी अथवा नींबू का रस या अन्य अम्ल को शहद में मिलाकर बनाई जाती थी।[22]

अतः यह भी स्पष्ट है कि मुगलों के भोजन में प्रचलित चावल से बने विभिन्न पकवानों का प्रचलन विशेष रूप से पश्चिमी राजस्थान के साथ–साथ कोटा राज्य के शासकों ने भी आत्मसात् किया।[23] कोटा में शाकाहारी भोजन में भी मुगलों के सम्पर्क के कारण बदलाव आया। मुगलों से अभिप्रेरित होकर शाही काजू आलू राजपूतों ने विवाह एवं विशेष अवसरों पर बनाना प्रारम्भ कर दिया।[24] मुगल प्रभाव के कारण खानें में शाही पनीर का प्रयोग किया जाने लगा।

खाद्य परम्परा पर ब्रिटिश प्रभाव

इसी प्रकार ब्रिटिश खान–पान का भी कोटा पर प्रभाव पड़ा। सामान्य लोगों के विचार पूर्व की अपेक्षाकृत अधिक उदार हुए। उनकी आदतों एवं रहन–सहन में परिवर्तन आने लगा। रसोईघरों में नवीन प्रकार की क्रॉकरी एवं एल्युमिनियम का प्रयोग आरंभ हुआ। सलाद, ब्रेड एवं आलू का प्रयोग खाने के लिए होने लगा, चाय जो कि कभी–कभार बीमारी के दौरान औषधि के रूप में प्रयुक्त की जाती थी प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् अब एक सामान्य पेय बन गया। मांसाहार को बढ़ावा मिला तथा मांस से विभिन्न प्रकार के व्यंजन तैयार किए जाने लगे। अंग्रेजों के प्रभाव के कारण शराब को भी बढ़ावा मिला। उच्च वर्ग के साथ–साथ निम्न वर्ग के लोग भी शराब का सेवन करने लगे। शुरूआत में तो कट्टरतावादी कोटा के ब्राह्मणों ने अंग्रेजो द्वारा लाये गये आलू और टमाटर का सेवन करना भी ठीक नहीं समझा। किन्तु बाद में तो वे चाय, बिस्कुट, सोडा आदि तक का सेवन करने लगे तथा शराब से बनी औषधियों का सेवन बिना किसी हिचकिचाहट के करने लगे।[25]

इस प्रकार स्पष्ट है कि मुगलों व ब्रिटिश सम्पर्क के कारण कुलीन व साधारण वर्ग के सामान्य रूखे–सूखे भोजन का स्थान बहुमूल्य, विशिष्ट एवं स्वादिष्ट भोजन ने ले लिया। शरीर की स्वच्छता के स्थान पर भोजन की स्वच्छता पर विशेष बल दिया गया।[26] मुगल व अंग्रेजी समाज की जो रूचियां थीं, उनमें सुस्वाद भोजन उनकी प्रमुख रूचि थी। वैसे तो उनका खान–पान उनकी व्यक्गित रूचि, जलवायु देश में उपलब्ध वस्तुओं तथा उनकी आर्थिक स्थिति पर निर्भर करता था, लेकिन फिर भी वे इसके लिए मुक्त हाथ से व्यय करते थे। दुर्लभ फल, अद्भुत उबले हुए पदार्थ, पाकशास्त्र कला के अनुसार बनाये हुए स्वादिष्ट व रूचिकर भोजन, जिनका विकास ईरान और यूरोप के समाज में हुआ था। भोजन के अनूठे प्रयोग से दोनों जातियों में मध्य सामाजिक एवं सांस्कृतिक समन्वय को बढ़ाया मिला।[27]

सन्दर्भ

1 शर्मा, ब्रजकिशोर, आधुनिक राजस्थान का आर्थिक इतिहास, पृ. 133–134
2 कोटा शाखा, फाईल नं. आर–5– 183–1931 (लागों की सूची क्रम संख्या 139), राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर
3 शर्मा, ब्रजकिशोर, पूर्वोक्त, पृ. 135
4 ओझा, गौरीशंकर हीराचन्द, राजपूताने का इतिहास, पृ. 11
5 बून्दी गढ़ रिकॉर्ड ऊपरी कमाः बस्ता नं 20 रू फाइल नं 9 सन 1928–1931
6 बून्दी गढ़ रिकॉर्ड ऊपरी कमाः बस्ता नं. 20 रू फाइल नं. १ सन 1928–1951
7 रनजोर पाक रतनाकर (प्रथम खण्ड), पृ. 55क
8 वही, (प्रथम खण्ड), पृ. 33क 7 रनजोर पाक रतनाकर (प्रथम खण्ड) पृ 41
9 रनजोर पाक रतनाकर (प्रथम खण्ड) पृ 41
10 हाड़ा, सोन कंवर, बून्दी राज्य की कला व संस्कृति, पृ. 123
11 वही, पृ. 123–124
12 वही, पृ. 124
13 सक्सेना, अरविन्द कुमार, कोटा राज्य का इतिहास (सन् 1818–1948 तक) पृ. 56
14 कोटा दुर्ग रिकॉर्ड बरता से 72 सन् 1929 फाइल नं. 4
15 रनजोर पाक रतनाकर प्रथम खण्ड, पृष्ठ 65–64
16 मनोहर, राघवेन्द्र सिंह, राजस्थान के राजघरानों का सांस्कृतिक अध्ययन पृ. 185–186
17 भंडार नं. 1, बस्ता नं. 59, मोजालीक बही 1767 ई.
18 मेहता, जे.एल., एडवान्स स्टडी इन द हिस्ट्री ऑफ मिडेवल इण्डिया, भाग 3, पृ. 211
19 शर्मा, डॉ. गोपीनाथ, सोशल लाइफ इन मिडीवल राजस्थान (1500–1800), पृ. 78
20 वही
21 खुराना, डॉ. के.एल., पूर्वोक्त, पृ. 46
22 वही
23 मिश्रा, के.एम., उत्तरी भारत में मुस्लिम समाज, पृ. 57
24 मेहता, जे.एल., पूर्वोक्त, पृ. 57
25 व्यास, प्रकाश, राजस्थान का सामाजिक इतिहास (7 वीं शताब्दी से 1950 ई.), पृ. 252
26 खुराना, डॉ. के.एल., पूर्वोक्त, पृ. 44
27 इम्पीरियल गजेटियर, भाग 8, पृ. 216; अर्सकिन, राजपूताना गजेटियर, भाग 3ए, पृ. 310